IJAER/January-February-2025/Volume-14/Issue-1 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research
(Peer-Reviewed, Open Access, Fully Refereed International Journal) Impact Factor:7.06

ग्वाल संस्कृति के पुरोधा नायक श्रीकृष्ण

डॉ. सुमन जैन

अखिल ब्रह्मांड नायक[1] श्रीकृष्ण आकुलित धरा की पुकार पर, जन–मन रंजन हेतु[2] ऐश्वर्यमय, आनंदमय जीवन को छोड़ धरा पर क्षत्रिय कुल में अवतरण करते हैं –

पापियों के भार से धरती अकुला रही थी
गोद में खिलाने को मैया मचल रही थी।
दर्शन को हे करुणा सिंधु!
अँखियाँ तरस रही थीं।
प्रियजनों की करुण पुकार पर
निराकार साकार हो रहा था।
धन्य है गोकुल गाँव, ग्वाल–बाल!
जहाँ कान्हा गैया चरा रहा था।

राजपुत्र होते हुए भी कृष्ण का पालन नंदगांव के नन्दबाबा, यशोदा मैया के द्वारा किया जाता है, जो हरिवंश और पुराणों के अनुसार ''पावन ग्वाल'' के रूप में प्रसिद्ध यादव गोपालक जाति के मुखिया थे एवं गोकुल के राजा थे।

कृष्ण परमेश्वर है, क्षत्रिय राजवंशी हैं, फिर भी जननायक बनने के लिए, लोकजीवन में समरस होने के लिए, किसानी, चारागाही संस्कृति को उत्कर्ष प्रदान करने के लिए ब्रजभूमि में नंगे पांव गोचारण करते हैं। ग्वालबाल सखाओं के संग दधि माखन चोरी करते हैं। वेणुवादन, नृत्य कर लोकसंस्कृति के रंग में रंग जाते हैं। कृष्ण की माधुर्य, सरस लीलाओं का सुन्दर अंकन हिन्दी

[1] रामचरितमानस, बालकाण्ड – ब्रह्माण्ड निकाया निर्मित माया रोम–रोम प्रति वेद कहै।
[2] रामचरितमानस, बालकाण्ड – विप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार। निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गोपार।।
गो द्विज धेनु देव हितकारी, कृपा सिंधु मानुष तनधारी। जन रंजन भंजन खल ब्राता, वेद धर्म रक्षक सुनू भ्राता।।
– मानस 7/28, विनय पत्रिका 130

साहित्यकारों का प्रिय विषय रहा है। चरितनायक कृष्ण को जीवन की खुली भूमि पर लाकर वात्सल्य रस सम्राट् सूरदास ने उनके व्यक्तित्व को नये संदर्भ दिये, नयी अर्थदीप्ति दी, लोकजीवन के बीच उन्हें प्रस्तुत किया। कृष्ण के जीवन का सर्वाधिक मनमोहक, सरस प्रसंग ब्रजभूमि में ही है। यहीं वे ग्वाल संस्कृति के पुरोधा नायक बन उभरते हैं। सूरदास ने बड़े ही रोचक एवं प्रभावशाली ढंग से किसान चारागाही संस्कृति का प्रतिफलन कृष्ण की मधुर लीलाओं के द्वारा किया है। कृष्ण नगर संस्कृति के केन्द्र मथुरा जाकर भी उस माधुर्य पूर्ण जीवन को भूल नहीं पाते हैं –

ऊधो मोहि ब्रज बिसरत नाहीं।
हंससुता की सुन्दर कगरी अरु कुंजन की छाँही,
वे सुरभी वे बच्छ दोहनी खरिक दुहावन जाहीं।[1]

कृष्ण की लीलाभूमि ब्रजमंडल है और जिन गोप अहीरों से उनका घनिष्ठ संबधं है, वे किसानी–चारागाही संस्कृति के प्रतिनिधि है। ब्रजमंडल में ग्रामजन, कृषक समाज और चरवाहों की जिंदगी का समाज है –सीधा–सादा, सरल, निश्छल, कृष्ण जन्म के साथ ही पूरा ब्रजमण्डल आनन्दोत्सव में डूब जाता है – घरनि–घरनि ब्रज होत बधाई। नन्द के द्वार पर एक ढाढ़ी आकर कहता है –

नंद जू मेरे मन आनन्द भयो, हौं गोवर्द्धन ते आयो।
तुम्हरे पुत्रभयो, मैं सुनि कै अति आतुर उठि घायो।।
जब तुम मदनमोहन करि टेरौ, यह सुनि कै घर जाऊँ
हौं तौ तेरे घर का डाढ़ी, सूरदास मेरो नाऊँ।।[2]

कृष्ण जन्म के अवसर पर –

पुहुप वृष्टि सुरपति करे, बोले जै जैकार।
सूरदास सब प्रेम मगन भये, गनत न राजा राय।।

कृष्ण जन्म से पूरी सृष्टि आनन्दमग्न है। गोकुल की ग्राम बालाएं आपस में बतियाती हैं, कहती हैं – ''सोभा सिंधु न अन्त रही री। नंद–भवन भरि उमँगि चलि, ब्रज की बीथिन फिरति बही री''।।

[1] सूरसागर
[2] सूरसारावली, पृ. 95, हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. 116

मध्यकालीन ब्रजमंडल का लोकजीवन कृष्ण में जीवंत हो उठा है। गोकुल, वृंदावन, यमुना, ग्वाल–बाल, गोधन, दधिमाखन सब उस दृश्य में रंग भरते हैं। लगता है लोकसंस्कार, लोकविश्वास तीज–त्योहार, टोना–टोटका सभी कृष्ण जीवन में उपस्थित है। कृष्ण जन्म के समय दाई कहती है –

''जसुदा नार न छेदन देहौ। मनिमय जटित
हार ग्रीवा को, वहें–आजु हो ले हो।
झगरनि ते हो बहुत खिझाई। कंचन हार
दिए न हिं मानति तुन्ही अनोखी दाई।''

राजा नंद के घर बेटा हुआ है तो सारी प्रजा उसमें शामिल है। दान–दक्षिणा आरम्भ हो जाती है – एक रंग भरा माहौल। दाई को कंचन हर दिया गया है, फिर भी वह पूर्ण संतुष्ट नहीं और नारछेदन में विलम्ब। नामकरण, अन्नप्राशन, वर्षगांठ, कनछेदन, कलेवा।[1] बंदनवार, चौक, पूरना, मांगलिक कलश, वेदध्वनि, मुहूर्त, लग्न सभी का दृश्य सूरदास ने बखूबी प्रस्तुत किया है। जैसे –

बधाई मे सिर पर दूब धरि, बैठे नंद सभसधि द्विजनि को
गाईं दीनी बहुत मँगाई के। कनक कोमाट लाह हरद दही
मिलाई छिरकै परस्पर छल–बल घाई के।

सूर साहित्य में श्री कृष्ण की बाल लीलाओं का बड़ा ही मनोहारी वर्णन हुआ है –

हरिजू की बाल छवि कहौ बरनि।
सकल सुख की सींव कोटि मनोज सोभा हरनि।।

कृष्ण कहीं मुख पर दही का लेप किए दौड़ रहे तो कहीं अपने ही प्रतिबिंब को पकड़ने की कोशिश में है –

सोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरुन चलत रेनु तन मण्डित मुख दधि लेप किए।।

सामान्य ग्वाल बाल की भांति वह अपनी मैया से चोटी बढ़ाने की जिज्ञासा करते हैं तो चंद्र खिलौने की जिद भी करते हैं –

मैया कबहिं बढ़ेगी चोटी?
किती बार मोहि दूध पिबत भई यह अजहूँ है छोटी।।
मैया मैं तो चन्द खिलौना लैं हों।

[1] कान्हकुंवर को कनछेदनो है, हाथ सुहारी भेली गुर की। विधि विहँसत, हरि हँसत, हेरि–हेरि यशुमति के धुकधुकी उर की।। – सूरसागर

जैहो लोटि अबै धरनी पै तेरी गोद न ऐहौ।।[1]

पूरा ब्रजमंडल कृष्ण की रूप माधुरी और बाल लीलाओं पर मोहित है। निरंकुश राजा कंस ने ग्वाल बाल को दूध, दही, घी, मक्खन से वंचित कर रखा है। तब कृष्ण ने बालकों को दधि, मक्खन, गोरस स्वास्थ्य बलवर्धक पेयों को उपलब्ध करवाने के लिए माखन चोरी की लीला की। यह लीला जनोपयोगी एवं इतनी सरस है कि सहृदयों के हृदय में तो वही छवि अंकित है – ''उर में माखनचोर गड़े।'' सूरदास का पद है –

तेरे लाल मेरो माखन खायौ।
दुपहर दिवस जानि घर सूनो,
ढूंढ़ि ढंढोरि आपही आयौ।
खोलि किवारि पैठि मंदिर मै,
दूध–दही सब सखनि खवायौ।
उफखल चढ़ि, सींवैफ को कौ लीन्हौ।।[2]

कवि कृष्णदास ने ग्वाल बाल के साथ यमुना नदी पर कंदुक क्रीड़ा का मनोहारी वर्णन किया है –

तरनि–तनया–तट आवत है प्रात समय,
कंदुक खेलत देख्यो आनंद को कदवा।

गोचारण के प्रसंग में कृष्ण अत्यधिक उत्साहित हैं। वे कहते हैं –

'आजु मैं गाइ चरावन जैहो।
वृन्दावन के भांति–भांति फल अपने कर मे खैहो।।[3]

ग्वालबाल गोपियों के साथ कृष्ण के जीवन में गौओं का भी अभिन्न स्थान है। गोचारण कृष्ण को अत्यधिक प्रिय हैं। एक ग्वाले की भांति ग्वालिन भोजन लाई है और सान–सानकर दधिभात खिलाया जा रहा है। अपनी गायों के प्रति कृष्ण की अपार ममता है। वे कहते हैं ''मैं अपनी सब गाय चरैहो।''कृष्ण की गाय सब समझती है। वे मुरली का शब्द सुनते ही दौड़ी चली आती है और गाएं भी अनेक प्रकार की धौरी–धूमरि, राती–राछी, चिन्हौरी, पियरी, भौरी, गोरी, गैनी, खैरी आदि। कृष्ण

[1] सूरसागर, सूरपदावली
[2] सूरसागर, सूरपदावली
[3] सूरसागर, सूरपदावली

ग्वालजन के बीच चरवाहे का रूप धारण करते हैं, कान्ह कांधे कामरिया कारी लकुट लिए कर घेरे हो। यथा –

धेनु चराए आवत
आजु हरि धेनु चराए आवत।
मोर मुकुट वनमाल विराज, पीतांबर फहरावत।।
मुखहि बजावत बेनु
धनि यह वृंदावन की रेनु।
नंद किसोर चरावत गैया, मुखहिं बजावत बेनु।।

प्रेमसखी नाम से प्रसिद्ध बक्शी हंसराज ने 'स्नेह सागर' एक अनूठा ग्रंथ लिखा है, जिसमें कृष्ण की गोचरण लीला का बड़ा ही सुंदर चित्रण है –

इत ते चली राधिका गोरी सौंपन अपनी गैया।
उत ते अति आतुर आनंद सो आए कुँवर कन्हैया।।

एरै मुकुटवार चरवाहे! गाय हमारी लीजौ।
जाय न कहूँ तुरत की ब्यानी, सौंपि खरक कै दीजौ।।
होहु चरावनहार गाय के बाँधनहार छुरैया।
करि दीजौ तुम आय दोहनी, पावै दूध लुरैया।।

कवि रसखान तो कृष्ण की चरवाह छवि पर न्योछावर है –

या लकुटी अरु कमरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौ।
आठहु सिद्धि नवैं निधिं के सुख नंद की गाय चराय बिसारौ।।[1]

कृष्ण अपना परमेश्वरत्व भूलाकर ग्वाल बाल–बालाओं के प्रेम में छाछ के लिए नृत्य करते हैं –

नारद से सुक व्यास रटै पचि हारे तऊ हारे तऊ पुनि पार न पावै।
ताहि अहीर की छोहरिया छछिया भर छाछ पै नाच नचावै।।

कृष्ण के माधुर्य भरे व्यक्तित्व में उनका देवत्व उपस्थित है। परमानन्द दास ने गोवर्धन लीला के कई पद लिखे हैं, जिसमें ब्रजजन को आश्चर्य है कि –

पर्वत लियो उठाय अंक ले सात बरस को बारो।[2]

[1] रसखान – मानुष हो तो वही रसखान बसौ संग गोकुल गांव के ग्वारन।
जौ पसु हो तौ कहा बसु मेरौ चरौ नित नंद की धेनु मँझारन।

[2] सूरसागर

सूरदास लिखते हैं –

सात बरस को कुँवर कन्हैया गिरिवर धरि जीत्यो सुराई।[1]

गोवर्धन पूजा के माध्यम से कृष्ण ने कृषक–ग्वाल समाज में पर्वत, प्रकृति, गोचर भूमि, वृक्ष, पर्यावरण सर्वाधिक उपयोगी है अतएव उन्हीं का पूजन सार्थक है न कि देवी–देवता का। यथा – जौ चाहौ ब्रज की कुसलाई तो गोवर्धन मानो।' इन्द्रकोप से पूरा ब्रजमण्डल डूबने लगता है तो गोकुल रक्षा के लिए कृष्ण अंगुली पर गोवर्धन उठा लेते हैं और सामाजिक मुक्ति दाता के रूप में समक्ष आते हैं। एक अहंकारी सत्ता को परास्त कर प्रकृति के महत्व को प्रतिपादित करते हैं।[2] मुरलीधर, माखनचोर, गिरधारी रूप में ब्रजमंडल के महारक्षक बनते हैं। लोकरक्षक कृष्ण का अभिषेक कामधेनु ने अपने दूध से किया और कृष्ण को 'गोविन्द' नाम से अलंकृत किया। यह गो, गोविन्द, गोप–गोपी, प्रकृति, पर्यावरण, धरती पूजन की कृषि परंपरा का पूजन है। वे ग्वालजन के यशस्वी नायक बनते हैं। वे जड़ परम्पराओं को चुनौती देते हैं और लोकरंजक कृष्ण का व्यक्तित्व उभरता है।

कृष्ण ने लोकजीवन में गहरे पैठकर ग्वालों के जीवन में श्रृंगार एवं माधुर्य के रंग भर दिये। कालिन्दी तट पर शरदपूर्णिमा के मादक वातावरण में रास रचाकर, सावन के दिनों में झूलन–बसंतलीला के श्रृंगारी दृश्य है। जमुना पुलिन रच्यौ हिंडोर, झूलत स्याम स्यामा संग। वसंत में ब्रज की प्रकृति एक नया सौन्दर्य पा जाती है। हरिसंग खेलति है सब फाग। फाग में लोकगीतों का भरपूर उपयोग हुआ है। सौ से अधिक पदों में सूरदास ने झूलन एवं बसन्त होली को प्रस्तुत किया है। इसमें संगीत, नृत्य, आनन्द, उल्लास, रंग अबीर, गुलाल आदि के रंग में रंगी ग्वाल संस्कृति जीवन्त हो उठती है।

खेलत फागु कुंवर गिरिधारी।
अग्रज, अनुज, सुबाहु, श्रीदामा, ग्वाल, बाल सब सखाऽनुसारी।।
इत नागरि निकसी घर–घर ते दै आगै वृषभानु दुलारी।
नव सत सजि ब्रजराज द्वारा मिलि
प्रफुल्लित वदन भीर भई भारी।।

निष्कर्ष –

[1] सूरसागर, सूरपदावली
[2] कुछ माखन के बल बढ्यौ, कछु गोपन करी सहाय। श्री राधाजू की कृपा सो, गोवर्धन लियो उठाय।।

कृष्ण समाज के बीच में लीलारत है। ग्वाल–बाल, गोपिकाएं–गोएं, वृन्दावन–चरागाह, दूध–दधि माखन, कृषि चरागाही को उजागर करते हैं। कृष्ण में देवत्व है, पर वे सामान्यजन के बीच सहज भाव से बिहार करते हैं। उनका जनरंजक प्रजातान्त्रिक व्यवहार वंदनीय है। माखनचोरी, रासक्रीड़ा की लीलाएं महान उद्देश्य प्रेरित है। कृष्ण ने ग्वाल जीवन को प्रकृति के आंगन में पूर्ण सौन्दर्य, माधुर्य के साथ जीया। ग्वाल संस्कृति में सरसता के इन्द्रधनुषी रंग भरते हुए, आशय की उदात्तता के कारण वे पुरोधा नायक बन गये। सूरदास ने वर्णन किया है कि कृष्ण जैसे महानायक के सामीप्य से प्रकृति खिल उठी। ब्रज का सुंदर वंशीवट, यमुना जी, वन, राधा, गोपियों का विहार, वहाँ का रास लता, कुंजों में झूलने का आनन्द अद्भुत है, अन्यत्र दुर्लभ है। तभी तो सूरदास ने कहा है –

धनि धनि ग्वाल, धन्य वृन्दावन
धन्यभूमि यह अति सुखकारी।।
धन्य दान, धन्य कान्ह मंगैया,
धन्य सूर तृण, द्रुम वन डारी।।

परमानन्ददास को कृष्ण एवं गोकुल संस्कृति से इतना प्रेम है कि वे तो वैकुण्ठ भी नहीं जाना चाहते। यही तो सार्थकता है ब्रजराज कृष्ण के नायकत्व की –

कहा करौ बैकुंठहि जाय?
जहँ नहिं नंद, जहां न जसोदा, नहिं जहँ गोपी ग्वाल न गाय।
जहँ नहिं जल जमुना को निर्मल और नहीं कदमन की छायं।
परमानन्द प्रभु चतुर ग्वालिनी, ब्रजरज, ब्रजराज तजि मेरी जाय बलाय।[1]

[1] परमानन्द सागर – 835 पद